शब्द-ब्रह्म

E ISSN 2320 – 0871

भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

17 नवम्बर 2020

पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

भोजपुरी लोकगीतों में अभिव्यक्त मानव जीवन एवं संस्कृति

डॉ.अजय कुमार वर्मा
कार्यवाहक प्राचार्य
भागवत प्रसाद मेमोरियल महिला महाविद्यालय
अतर्रा (बांदा), उत्तरप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

भोजपुरी लोकसाहित्य में मानव जीवन एवं उसकी संस्कृति का रंगरूप कैसा है? यदि इसका पता लगाना हो तो लोकगीतों पर दृष्टिपात किया जा सकता है। जिसमें जन्म से लेकर मृत्यु तक की विविधता, हर्ष- विषाद, सुखदुःख एवं प्रेम-उन्माद आदि के दर्शन होते हैं। स्पष्ट रूप से मानव जीवन एवं संस्कृति की अभिव्यक्ति लोकसाहित्य के लोकगीतों में होती है। किसी भी समाज की वास्तविक स्थिति जानने के लिए उसके लोकसाहित्य का अनुसंधान वांछनीय है। लोक साहित्य के लोकगीतों, लोकगाथाओं एवं लोककथाओं में भोजपुरी समाज के प्रचलित प्रथा, संस्कार, रहन-सहन, आचार-विचार, खान-पान, रीति-रिवाज आदि का चित्रण मिलता है। भोजपुरी क्षेत्र की सामाजिक स्थिति मनु द्वारा विभाजित चार वर्णों पर आधारित है। प्रत्येक वर्ण का धर्म और उसके कर्तव्यों का निर्वहन आज भी लोक समाज में देखा जाता है। भोजपुरी क्षेत्र की जातियाँ अपने-अपने व्यवसाय से जुड़ी हुई हैं। जैसे- कहार पालकी ढोने, कुम्हार- मिट्टी के बर्तन बनाने, तेली- तेल निकालने, धोबी- वस्त्र धोने, चर्मकार- जूते-चप्पल बनाने, गोंढ- भाड़ झोंकने, दुसाध-सुअर पालन, नाई- हजामत बनाने, चुड़िहार- चूडी व्यवसाय तथा डोंम- बांस द्वारा पात्र बनाने का काम करते हैं। इन जातियों के खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा आदि में परिवर्तन अवश्य हुआ है लेकिन उन पर जातीय संस्कृति की झलक वर्तमान समय में भी दिखाई देती है। लोकगीत मानव की स्वाभाविक अनुभूति है इसमें कृत्रिमता, आडम्बर एवं पाण्डित्य न होकर सहजता, सरलता एवं सरसता का पुट है। लोकमानस को जैसा अनुभव किया, वैसा ही अभिव्यक्त किया। यह मानवीय संवेदना वर्तमान समाज के लिए आवश्यक है। यदि मानवता को कायम रखना चाहते हैं, तो हमें इस लोक मानस से सीख लेनी होगी। प्रस्तुत शोध पत्र में भोजपुरी लोकगीतों में अभिव्यक्त मानव जीवन एवं संस्कृति पर विचार किया गया है।

भूमिका

लोक शब्द साधारणतः उस जनता के लिए प्रयोग किया जाता है जो सरल, सहज एवं स्वाभाविक जीवन व्यतीत करते हुए कृत्रिमता एवं आधुनिकता से अलग ग्रामीण परिवेश में निवास करते हैं। आदिम अवस्था में रहते हुए शिष्टजनों की आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति करते हैं। लोकगीत लोगों के हृदय की तीव्र अनुभूति की अभिव्यक्ति है। विभिन्न धाराओं में बहता हुआ मनुष्य गीत के माध्यम से अपने हृदय को खोलता है। लोकगीत उन लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है जो सुसंस्कृति तथा सुसभ्य प्रवाहों से बाहर कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में निवास करते हैं। संस्कृति किसी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों के समग्र स्वरूप का नाम है, जो उस समाज के सोचने, विचारने, कार्य करने के स्वरूप में अंतर्निहित होती है। संस्कृति मानसिक क्षेत्र की प्रगति की सूचना होती है। इस प्रकार मानसिक क्षेत्र में उन्नति की सूचक प्रत्येक

सम्यक कृति संस्कृति का अंग बनती है। एक समाज वर्ग के सदस्य के रूप में मानवों की सभी उपलब्धियां उसकी संस्कृति से प्रेरित कही जा सकती हैं। जिसमें रीति-रिवाज, परम्पराएँ, पर्व, जीने के तरीके और जीवन के विभिन्न पक्षों पर व्यक्ति विशेष का अपना दृष्टिकोण भी सम्मिलित है।

भोजपुरी लोकसाहित्य में मानव जीवन एवं उसकी संस्कृति का रंगरूप कैसा है ? यदि इसका पता लगाना हो तो लोकगीतों को देखा जा सकता है। जिसमें जन्म से लेकर मृत्यु तक की विविधता सम्मिलित है। हर्ष-विषाद सुख-दुःख एवं प्रेम-उन्माद की झांकियाँ देखने को मिलती हैं। स्पष्ट रूप से मानव जीवन एवं उसकी संस्कृति की अभिव्यक्ति लोकसाहित्य के लोकगीतों में है। लोकसाहित्य के संस्कार गीत, श्रमगीत, विविध गीत, हरपरवरी, व्रत गीत, जाति गीत, जतसार गीत, त्यौहार एवं ऋतु गीतों आदि में मानव जीवन एवं उसकी संस्कृति की विविधता भरी पड़ी है। जिसमें लोक मानस की स्वच्छन्दता एवं स्वाभाविक अनुभूतियां हैं। इसमे कहीं भी न तो कृत्रिमता है और न ही दिखावापन।

लोकसाहित्य के संस्कार गीतों में संस्कृति

मनुष्य के जीवन में विभिन्न संस्कारों के अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं, उन्हें संस्कार गीत कहते हैं। जैसे - पुत्र जन्म, मुण्डन, विवाह आदि। इन गीतों में प्रेम, उत्साह, हर्ष एवं विषाद आदि के भाव होते हैं। पुत्र जन्म के समय लोक परम्परा में एक गीत गाया जाता है जिसे सोहर कहते हैं। जिसका मुख्य वर्ण्य विषय प्रेम है। इसमें स्त्री-पुरुष की रति क्रिया गर्भाधान, दोहद, प्रसव पीड़ा, धाय को बुलाना एवं पुत्र जन्म का वर्णन पाया जाता है। भवभूति ने पुत्र या संतति को स्त्री और पुरुष दोनों के प्रति अभिन्न प्रेम की गाँठ कहा है।

अन्तःकरण तत्वस्य, दाम्पतयोः स्नेह संप्रपात,
आनन्द ग्रन्थिरेको य मपत्यमिति कथ्यते।

जन्म गीत (सोहर) - लोकसाहित्य में इसका वर्णन सहज रूप में इस प्रकार है -

सइजत बूझि जाहुं आपन अवगुनवा मुसुकि जनि बोलहुं हो।
सइजत मिलिजुलि बन्हली मोटरिया खोलत बेरिया अक्सर हो।[1]

दाम्पत्य प्रेम की पराकाष्ठा पुत्र जन्म की सूचना है, प्रेम की गाँठ को पति-पत्नी दोनों मिलकर बांधते हैं, जिसमें स्त्री को कितनी शारीरिक पीड़ा सहनी पड़ती है। उसके बाद भी वह अपने जीवन की सार्थकता पुत्र या पुत्री के जन्म को मानती है।

विवाह गीत - विवाह के अवसर पर नाना प्रकार के आयोजन होते हैं, भोजपुरी समाज में विवाह के अनेक रूप प्राप्त होते हैं, जिनका वर्णन लोकगीतों में मिलता है। प्रान्तों और अंचलों में विवाह के समय गाये जाने वाले गीत प्राप्त होते हैं। भोजपुरी समाज में मान्यता है कि विवाह एक धार्मिक संस्कार है, कन्या दान एक पुनीत कर्म है।

अन्न दान के दान न कहीं, सोना दान जगदीस जी।
कन्या दान उतिन बड़ बाबा, जाहुं मन राखहु ज्ञान जी।।

विवाह के गीतों में मानव जीवन का तार उसी प्रकार जुडा हुआ है जिस प्रकार घरों में सिंक, सीमेन्ट, ईंट का सामंजस्य रहता है। एक विवाह के गीत में पिता का पुत्री के प्रति प्रेम तथा स्नेह का भाव इस प्रकार है -

आवा-आवा बन्नी प्यारी, बइठा मोरे मड़ऊवा, अँचरा में भरिला सुहगवा, सुहाग भेजें तुहरो सजनवा।
पापा सिसकि रोवें, मम्मी सिसिकि रोवें, आज बेटी भइलू सपनवा।
भइया सिसिकि रोवें, भौजी सिसिकि रोवें, आज बहिनी भइलू सपनवा।।[2]

विवाह गीत में परिवार के सदस्यों की मनोव्यथा भी चित्रित होती है। हिन्दू विवाह में समय गोत्र, पिण्ड और पूज्य का विशेष ध्यान रखते हुए स्व वर्ण विवाह की मान्यता है। भोजपुरी समाज में विवाह के निम्नलिखित प्रकार मिलते हैं - चढ़िके विवाह, डोला कढ़वा, गोलावट, छंपोछिया, बेटी बेंचल, स्वयंबर इनमें चढ़िके विवाह के अतिरिक्त अन्य सभी विवाह लाचारी एवं विवशता की स्थिति में किए जाते हैं। एक किशोरी का विवाह वृद्ध व्यक्ति से हो जाता है। उस किशोरी की विवशता एवं उसके हृदय की आग भोजपुरी लोकगीतों में आज भी जल रही है।

कवन कसूर कइलीं बुढउ से विवाह कइलऽ। सउदा करे में काहें ठगइलीं ए बाबूजी।।
मुँहवाँ में दाँत नइखे, भतवों कुचात नइखे। डन्डा लेके रहियो पर चलेले हो बाबूजी।।
अँखिया से लउके नाहीं, कनवों से सुने नाहीं। गतर-गतर के चाम झूलेला हो बाबूजी।।
बभना के पोथी जरे, नउवा के डांड़ टूटे। अगुवा के मूवे जेठ पुतवा ए बाबूजी।।[3]

यह गीत हास्य सृजन के साथ-साथ समाज की यथार्थ स्थिति का वर्णन करता है। आज भी समाज में बेमेल विवाह होते हैं, जिसका कारण गरीबी एवं मजबूरी होती है। प्रायः भोजपुरी क्षेत्र में विवाह के समय दुलहन विदा नहीं होती थी। कुछ समय बाद उसका गवना (द्विरागमन) होता था। इसका मूल कारण यह था कि पहले के विवाह कम उम्र में हो जाते थे और कुछ समय बाद कन्या शारीरिक रूप से सुदृढ़ एवं गृहस्थी का बोझ उठाने योग्य हो जाती थी, तब उसका गवना होता था। कन्या की विदाई वैधव्य आदि प्रसंगों पर जो गीत प्रचलित हैं, उसमें करुण रस का आधिक्य है, माता-पिता परिवार के सभी सदस्य वियोग में इस प्रकार बिलख रहे हैं -

दिनवा हरेलू ए बेटी, भूखिया रे पियसिया।
रतिया हरेलू ऐ बेटी, बाबा आँखि रे निदिया।।[4]

पुत्री की विदाई हो जाने पर माता-पिता एवं परिवार के सभी सदस्यों की भूख-प्यास समाप्त हो जाती है और रात में नींद नही आती। प्रेम की पराकाष्ठा देखिए। संजोग के समय भी पुत्री के प्रेम से वही स्थिति रहती है और उसके चले जाने पर भी वही स्थिति है, लेकिन दोनों के भाव में अन्तर है, एक में संयोग है और दूसरे में वियोग है।

व्रत गीत एवं जाति गीतों में लोक संस्कृति

भारत विभिन्न धर्मों एवं संस्कृति का देश है, जिसमें व्रत गीतों, जाति गीतों में लोक समाज की संस्कृति स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। लोक समाज में हर मास कोई न कोई व्रत या त्यौहार मनाया जाता है, इन अवसरों पर स्त्रियाँ अपने कोमल कंठों से विविध प्रकार के गीत गाती हैं। नाग पंचमी, श्रावण शुक्ल पंचमी को मनाया जाता है। इस दिन स्त्रियाँ घर को गोबर से लीप-पोत कर साफ करती हैं, दीवार पर सांप की आकृति बनाती हैं। इस दिन धान का लावा और गाय का दूध नाग देवता को चढ़ाया जाता है। इस त्यौहार से संबन्धित लोकगीत में मानव धर्म की छटा देखी जा सकती है। जिसमें लोक समाज का जीवों के प्रति प्रेम एवं संरक्षता का भाव दिखता है।

बहुरा व्रत भादों में कृष्ण पक्ष चतुर्थी को मनाया जाता है। इस दिन स्त्रियाँ दिन भर व्रत रहती हैं तथा शाम को पोखरों या नदी में स्नान करके बहुला उसके बच्चों तथा सिंह की मिट्टी की मूर्ति बना कर पूजा करती हैं। इस व्रत में मां का संतान के प्रति प्रेम दिखाई पड़ता है। इस व्रत की नायिका बहुला है, इसी के नाम पर इस व्रत का नाम बहुरा पड़ा।

जिउतिया व्रत- आश्विन कृष्ण पक्ष अष्टमी के दिन मनाया जाता है, यह केवल स्त्रियों का ही व्रत है, जिसे पुत्रवती स्त्रियाँ अपने पुत्र के संकट निवारण एवं दीर्घायु होने के लिए करती हैं। इसमें देवी देवताओं से संबन्धित गीत गाये जाते हैं।

बटुरा सखी सभे बटुरा सहेलरि हो,
सखिया मिलि जुली चलीं यमुना पर, त जमुना नहाये।
कुछ सखी हाथ धोवैं, कुछ सखी गोड़ धोवैं,
कुछ सखी गइली यमुना पार, त जहाँ हो देवकी रोवै।
सखिया किया तोहरे सास ससुर दुख किया तोहार नइहर दूर बसे,
सखी किया तोहार हरि परदेष कवन दुख रोवेलू।
नाहीं मोरे सास ससुर दुख नाही नइहर दूर बसे,
सखी नाहीं मोरे हरि परदेष कोखि दुख रोइला।
सात गरभ हमरे रहलै सातो कंस मरलै,
सखी आठे गरभ हमरे कोखिया हवै उहैं दुख रोइला।
सखी अपने गरभ हम मरबै त तोहार जियाइबै,
नूनवाँ त मिलेला उधार त तेलवा पइच मिले,
सखी कोखिया के कवन उधार, कोखिया दुख रोइला।[5]

उपर्युक्त गीत में देवकी की करुणा का चित्रण है। ममतामयी मां अपने पुत्र की दीर्घायु के लिए इस कठिन व्रत का अनुष्ठान करती है। कंस द्वारा सात बच्चों का बध करने पर देवकी को सांत्वना देते हुए यशोदा का कहना है कि मैं अपने बच्चे को मारकर तुम्हारे बच्चे को जीवित करूंगी। किसी भी माँ के लिए सबसे प्रिय उसका पुत्र होता है, ऐतिहासिक एवं पौराणिक आख्यानों में ऐसी घटनाएं मिलती हैं कि एक पुत्र की रक्षा के लिए अपने पुत्र की बलि दे देती है। इस प्रकार मानव जीवन में मानवता की स्थापना इन गीतों का उद्देश्य होता है।

जाति गीत - भोजपुरी समाज में प्रचलित लोक गीतों में कुछ ऐसे भी गीत हैं, जो ब्राहमण क्षत्रिय आदि को छोडकर अधिकतर पिछड़ी एवं दलित जातियों में गाया जाता है। विरहा अहिर (यादव) जाति का प्रसिद्ध लोकगीत है जिसे ये विवाह के दौरान पशु चराते हुए गाते हैं।

छोट-मोट रहलीं त गइया चरवलीं, पियनी बकेनवाँ के दूध।
हाली-हाली गवना करइहे माटि लगना, कि खिलल बाय बकेनवा के दूध।।[6]

भोजपुरी प्रदेश में विरहा गाथा के रूप में गाये जाते हैं, जिसमें ऐतिहासिक, सामाजिक समस्याओं एवं घटनाओं का महत्वपूर्ण विवरण रहता है। इसमे गायक, ढोलक, करताल, हारमोनियम, झांझ आदि वाद्य यंत्रों के साथ गाते हैं। इन गीतों में लोक मानस संस्कृति की झांकी होती है। वर्तमान समय में इनका वर्चस्व मीडिया एवं सिनेमा में बढ गया है, जबकि आज से 20 वर्ष पहले विरहा सुनने के लिए हजारों की संख्या में लोग एकत्र हो जाते थे।

पचरा - दुसाध जाति के लोगों में पचरा गीत गाया जाता है। इन लोगों में अंधविश्वास के कारण कुछ सामाजिक बुराइयाँ हैं। इनमें टोना-टोटका, प्रेत आदि पर भी विशवास किया जाता है। यदि कोई बीमार पड़ता है तो रोगी को ठीक

करने के लिए ओझा या दरसनियाँ को बुलाया जाता है, जो पचरा नामक लोकगीत गा-गाकर अपनी देवी-देवता का आह्वान करते हैं। आज भी अध्किकांश जातियां इस अंधविश्वास की शिकार हैं। उन्हें दवा से अधिक ओझा पर विश्वास है।

काली भवारी बिच डेरा, देखा हो भवानी दिल उमडे ला मेरा।
तु हो मइया जननी मै बालक तेरा, पाँचों पंडवा करनै रउरे सेवा।
अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेवा,अर्जुन पोथिया बाँचि काली के सुनावै।
अन्हरा के आख देहलु कोरिहन के काया, बांझिन बेटवा खेलावै महामाया।[7]

कँहरवा - पूर्वी उत्तरप्रदेश में गोंड़ जाति के लोगों की संख्या अधिक है। इनका मुख्य गीत कँहरवा है। प्राचीन समय में पहले जब वाहनों की सुविधा नहीं थी तो इस जाति के लोग विवाह में विदाई के समय पालकी ढोते थे। डोली या पालकी के लिए जो गीत गाये जाते थे उसे कँहरवा कहते हैं। अवघड़ दानी (शंकर) विवाह के समय का गीत है, जिसमें पार्वती, शिव से उनका रूप बदलने के लिए विनती कर रही हैं।

ऐतनी अरजिया लेबा मान, चरन लागौं जोगिया, बाप भइले विकल, बेहाल भइली मइया।
चरन लागौ जोगिया देखि के सुरति सबके, आवेले रोवइया चरन लागौ जोयिा।।
बनि जा दुइजिया के चान, चरन लागौ जोगिया।।[8]

धोबऊ (धोबी गीत) - धोबियों में भी नाच के गीत प्रचलित हैं। जिसे ये शादी के समय नृत्य करते हुए गाते हैं। लगभग 60 वर्ष पुराना यह धोबी गीत प्रस्तुत है -

गउरा के संग भयलै शिव के बिअहवा, कि देव चलि आवै बड़ी वेग।
धोबिनियाँ देव चलि आवै बड़ी वेग, सबके लुटावे धोबी अनधन सोनवा।
तुँहही केचेला घर पन बरेठा, अब मोर गँजवा से मनवा जुड़इने।
कि भँगिया में होई स्नान बरेठिन, कि भँगिया में होई स्नान।[9]

इस गीत में बरेठा-बरेठिन धोबी और उसकी पत्नी के लिए संबोधित है। वैसे इन जाति गीतों में भोजपुरी लोग समाज की परिस्थिति एवं मनःस्थिति के साथ-साथ संपूर्ण संस्कृति का दर्शन होता है, जिसकी सहजता एवं स्वाभाविकता सभी को आकर्षित करती है। सामुदायिकता की भावना जो पहले विद्यमान थी आज के परिवेश में वह बात अब दिखाई नहीं देती है।

लोकगीतों में सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का चित्रण

किसी भी समाज की वास्तविक स्थिति को जानने के लिए उसके लोकसाहित्य का अनुसंधान वांछनीय है। लोक साहित्य की लोकगीतों, गाथाओं एवं लोक कथाओं में भोजपुरी समाज में प्रचलित प्रथा, संस्कार, रहन-सहन, आचार-विचार, खान-पान, रीति-रिवाज आदि का चित्रण मिलता है। भोजपुरी क्षेत्र की सामाजिक स्थिति मनु द्वारा विभाजित चार वर्णों पर आधारित है। प्रत्येक वर्ण का धर्म और उसके कर्तव्यों का निर्वहन लोक समाज में आज भी देखा जा सकता है। भोजपुरी क्षेत्र की अन्य जातियाँ अपने व्यवसाय से जुड़ी हुई हैं। जैसे- कहार पालकी ढोने, कुम्हार- मिट्टी के बर्तन बनाने, तेली- तेल निकालने, धोबी- वस्त्र धोने, चर्मकार- जूते-चप्पल बनाने, गोंढ- भाड़ झोंकने, दुसाध- सुअर पालने, नाई- हजामत बनाने, चुड़िहार- चूडी व्यवसाय तथा डोम- बांस द्वारा पात्र बनाने का काम करते

हैं। इन जातियों के खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा आदि में परिवर्तन तो अवश्य हुआ है लेकिन उन पर जातीय संस्कृति की छाप वर्तमान समय में भी दियाई देती है। भोजपुरी क्षेत्र मे स्त्री की दशा बहुत सुदृढ नहीं है, तो दयनीय भी नहीं है। वह पति के साथ श्रम करती है, खाना पकाती है, बच्चों का पालन-पोषण के साथ-साथ गृहस्थी भी सम्भालती है। उसके बाद भी उसे पति के कोप का भाजन बनना पड़ता है। पति-पत्नी के पारस्परिक संबन्ध, सास का दारुण चित्रण, ननंद की दुष्टता, देवर की दुष्चरित्रता, भवहि व भसुर के अनुचित व्यवहार आदि का वर्णन भोजपुरी समाज के प्रति वितृष्णा का भाव पैदा कर देता है। इसके विपरीत पिता-पुत्री, बहन और भाई का स्वाभाविक स्नेह, पत्नी का पतिव्रत धर्म, पति के रक्षार्थ पत्नी की मंगल कामना एवं उसके व्रत उपवासों के असहनीय कष्ट भोजपुरी समाज की श्रेष्ठता को प्रतिबिम्बित करते हैं।

मनुष्य का आर्थिक संगठन भोजन तथा संपति से किसी न किसी रूप में सम्बद्ध है। भोजपुरी लोक साहित्य में पशुपालन, खेती, व्यापार, कल-कारखाने एवं शिल्प आदि का चित्रण मिलता है। भोजपुरी लोकगीत में समाज के आर्थिक पक्ष का चित्रण इस प्रकार है -

टुटही मड़इया बुनिया टपकइरे, के सुधि लेवे हमार।
जेठा छवावइ आपन बंगलवा, देवरा छवावै चैपार।
हमारा मंदिलवा कोऊ न छवावै जेकर पियवा विदेस।।[10]

केहो जइहें हाजीपुर केहो जइहें पटना,
केहो जइहें कलकतवा के नौकरिया ए बिरिना।[11]

प्रथम गीत में एक स्त्री अपने दु:ख तथा गरीबी का वर्णन करती है, जिसमें उसकी निर्धनता का मर्मस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत किया गया है। दूसरे गीत में खेती से परिवार का भरण-पोषण नहीं हो पाता है, जिसके कारण परिवार के सभी पुरुष नौकरी करने के लिए बाहर चले जाते हैं। घर में केवल स्त्रियाँ ही बच जाती हैं। इसके साथ-साथ लोकगीतों में शोषक और शोषित वर्ग के वास्तविक रूप का वर्णन है। किसान दिन-रात परिश्रम करते हैं किन्तु पेट नही भरता। कर्ज लेकर खेती करते हैं, फसल में भी मार पड़ जाती है। स्त्री, बच्चे फटे चीथड़े कपड़े पहने रहते हैं। किसान कर्ज भरते-भरते एक दिन इस संसार से चला जाता है। भोजपुरी समाज की आर्थिक स्थिति में अमीरी-गरीबी का समन्वय नहीं है। सम्पन्न लोग सुख-सुविधा से रहते हैं, लेकिन गरीब अपने जीवन की कठिनाइयों तथा यथार्थ को भूलकर रामराज्य का स्वप्न देखता है।

निष्कर्ष

लोकगीत मानव की स्वाभाविक अनुभूति है। इसमें कृत्रिमता, आडम्बर एवं पाण्डित्य न होकर सहजता, सरलता एवं सरसता का पुट है। जैसा लोकमानस ने अनुभव किया, वैसा ही अभिव्यक्त किया। हृदय के उद्गार लोक में परम्परागत मौखिक रूप से आज भी विद्यमान है। मानव जीवन एवं उसकी संस्कृति का यथार्थ चित्रण कहीं है तो उसके लोक साहित्य में है। लोक का रहन-सहन, वेश-भूषा, क्रिया-कलाप, आपसी प्रेम एवं व्यवहार का चित्रण बड़ी सहजता के साथ मिलता है। इसमें स्त्रियों की स्थिति उनकी पीड़ा एवं उनके प्रति अत्याचार आदि का सम्यक चित्रण मिलता है। मूल रूप से इस शोध पत्र का उद्देश्य लोक मानस की स्थिति को स्पष्ट करने के साथ-साथ उनमें मानवीय संवेदना को उजागर करना है। यह मानवीय संवेदना वर्तमान समय में प्रासंगिक है। यदि मानवता को कायम रखना चाहते हैं, तो हमें इस लोक मानस की मानवीय

संवेदनाओं से सीख लेनी होगी। लोक मानस की संस्कृति आज प्रभावित हो रही है। आज लोक संस्कृति आधुनिकता के प्रभाव से अपनी सहजता, सरसता एवं स्वाभाविकता को खो रही है। ऐसे समय में समाज एवं साहित्य का दायित्व बनता है कि इनका संरक्षण करते हुए इनकी सामुदायिक भावनाओं एवं स्वाभाविकताओं को मानवता के रक्षार्थ अपनाने का प्रयास करें।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 उपाध्याय कृष्ण देव, भोजपुरी ग्राम गीत भाग-1, पृष्ठ 67

2 श्रीमती रीता देवी, गोपालपुर सरदहां बाजार, आजमगढ़ (लोकगीत)

3 श्री रामबचन शर्मा, ग्राम पो. तेलमा जमालुद्दीनपुर बलिया

4 श्रीमती तेतरी देवी, ग्राम पो. तेलमा जमालुद्दीनपुर बलिया

5 श्रीमती राजकली देवी, ग्राम पो. तेलमा जमालुद्दीनपुर बलिया

6 श्री वीरबहादुर यादव, टेकनपुरा बलिया

7 श्री त्रिवेणी दुसाध ग्राम पो. तेलमा जमालुद्दीनपुर बलिया

8 श्री चनरू गोंड, ग्राम पो. तेलमा जमालुद्दीनपुर बलिया

9 श्री हरिहर धोबी, ग्राम पो. तेलमा जमालुद्दीनपुर बलिया

10 उपाध्याय डॉ.कृष्ण देव, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 288

11 (डॉ.) मिश्र श्रीधर, भोजपुरी लोकसाहित्य सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ 181